बाइबल टीचर

वर्ष 18 जनवरी 2021 अंक 2

सम्पादकीय

परमेश्वर सच्चे लोगों की सहायता करता है

परमेश्वर इस खोज में रहता है कि सच्चे लोग उसके पीछे आये तथा उसकी सेवा करें। 2 इतिहास की पुस्तक में हम पढ़ते हैं कि प्रभु की दृष्टि उन लोगों पर लगी रहती है, यानि वह खोजता है कि कौन मेरी आज्ञा को सही तरीके से मानता है। 16:9 में लिखा है, ''देख, यहोवा की दृष्टि सारी पृथ्वी पर इसलिये फिरती रहती है, कि जिनका मन उसकी ओर निष्कपट रहता है, उनकी सहायता में वह अपनी सामर्थ दिखाये।''

बाइबल में हम दाऊद के विषय में पढ़ते हैं जो अपने पिता की भेड़-बकरियों की देख-रेख करता था। परन्तु प्रभु ने उसमें कुछ योग्यताओं को देखा, उसने उसे अपने कार्यो के लिये चुन लिया जैसे कि हम पढ़ते हैं फिर उसे अलग करके दाऊद को उनका राजा बनाया, जिसके विषय में उसने गवाही दी कि मुझे एक मनुष्य यिशे का पुत्र दाऊद मेरे मन के अनुसार मिल गया है, वहीं मेरी सारी इच्छा पूरी करेगा। (प्रेरितों 13:22) यहां हम देखते हैं कि परमेश्वर ने दाऊद को इसलिये चुना था क्योंकि वह उसकी इच्छा पर चलता था। यदि आप परमेश्वर के लिये कार्य करना चाहते है। तो सच्चे मन से कहिये कि ''परमेश्वर मैं सच्चे मन से तेरे कार्य को करना चाहता हूं, और तुझे प्रसन्न करना चाहता हूं।''

मूसा को परमेश्वर ने इसलिये चुना था क्योंकि वह सच्चे और साफ मन से लोगों की अगुवाई करना चाहता था। वह लोगों के लिये दुखी होता था, उनके लिये परमेश्वर से प्रार्थना करना था। परमेश्वर के क्रोध से अपने लोगों को बचाना चाहता था। (भजन 106:23)।

जब हम लूका 13:6 को देखते है, तो वहां यीशु एक अंजीर के पेड़ के पास आता है और वह उस पेड़ पर फल ढूंढ रहा था, परन्तु उस पर फल नहीं था, और यीशु इस बात से निराश हो गया। यीशु आज अपने लोगों में फल ढूंढ रहा है परन्तु कुछ उसके अपने लोग ऐसे हैं जो निक्कमें हैं और उनमें कोई फल नहीं है। यीशु ने कहा था, ''सो उनके फलों से तुम उन्हें पहचान लोगे। ''जो मुझ से हे प्रभु हे प्रभु कहता है, उन में से हर एक स्वर्ग के राज्य में प्रवेश न करेगा, परन्तु वही जो मेरे स्वर्गीय पिता की इच्छा पर चलता है।'' (मत्ती 7:20, 21) जो लोग यीशु के पास आना चाहते हैं तथा उसके कार्य को करना चाहते हैं उन्हें मन-फिराव के फल

लाने चाहिए। (लूका 3:8)। कई लोग कहते तो हैं कि हमने मन से यीशु को अपना लिया है तथा सच्चे मन से उसकी सेवा करना चाहते हैं परन्तु उनमें मन-फिराव के फल नहीं दिखते।

परमेश्वर ईमानदार लोगों को चाहता है कि वे उसकी सेवा करें। फरीसी और सदूकी परमेश्वर का कार्य करते तो थे, परन्तु दिखाने के लिये वे दिखावा करते थे। यीशु ने कहा था, ''हे कपटी शास्त्रियों और फरीसियों तुम पर हाय, तुम चुना फिरी हुई कब्रो के समान हो जो ऊपर से तो सुन्दर दिखाई देती है, परन्तु भीतर मुर्दों की हड्डियों और सब प्रकार की मलिनता से भरी हैं। इसी रीति से तुम भी ऊपर से मनुष्यों को धर्मी दिखाई देते हो, परन्तु भीतर कपट और उन अधर्म से भरे हुए हो। (मत्ती 23:27-29)।

परमेश्वर ऐसे लोगों की सेवा चाहता है जिनके मन साफ हैं। आप यदि एक मसीही हैं और सेवा करना चाहते तो अपने को तैयार करें। जो लोग सच्चाई से प्रभु की सेवा करना चाहते हैं, शैतान उनका पीछा करता है और वह नहीं चाहता कि आप सच्चे मन से उसकी सेवा करे। इसलिये बाइबल में चेतावनी दी गई है, ''सचेत हो और जागते रहो क्योंकि तुम्हारा विरोधी शैतान गर्जने वाले सिंह की नाई इस खोज में रहता है कि किसको फाड़ खाए।'' (1 पतरस 5:8)। जो लोग प्रभु के लिये कार्य करना चाहते है उन्हें प्रयत्न करना चाहिए कि शैतान का उन पर दाव न चले और उसकी युक्तियों से अंजान न रहें। (2 कुरि. 2:11)।

यदि आप प्रभु के पीछे चल रहे हैं तथा उसके कार्य को करना चाहते हैं तो यीशु जैसा स्वभाव आपके अन्दर होना आवश्यक है। (फिलि 2:5)। यीशु का स्वभाव नम्र था। इसलिये उसके पीछे चलने वाले और उसकी सेवा करने वालों को भी नम्र होना चाहिए। आप यदि सच्चे मन से उसकी सेवा कर रहें तो अंत में आप पौलुस की तरह कह सकते हैं, ''मैं अच्छी कुश्ती लड़ चुका हूं, मैंने अपनी दौड़ पूरी कर ली हैं'' (2 तीमु. 4:7)। और आपको भविष्य में धर्म का मुकुट मिलेगा, और यह प्रभु उन सबको देगा जो उसके प्रगट होने को प्रिय जानते हैं। (2 तीमु. 4:8)।

पुराने नियम में मीका भविष्यद्वक्ता ने कहा था कि परमेश्वर मुझसे चाहता है कि उसके साम्हने मैं झुकुं। हे मनुष्य वह तुझे बता चुका है कि अच्छा क्या है, और यहोवा तुम से इसे छोड़ और क्या चाहता है कि तू न्याय में काम करे, और कृपा से प्रीति रखे, और अपने परमेश्वर के साथ नम्रता से चले। (मीका 6:6-8)। मीका के समय में जो लोग अपने को धर्मी समझते थे, बलिदान चढ़ाते थे, धार्मिक गीत गाते थे। बाहर से बड़े धार्मिक लगते थे परन्तु वास्तव में उनके मन सही नहीं थे।

मीका उन्हें बताना चाहता था कि परमेश्वर की सेवा करने के लिये उनकी नियत अच्छी होनी चाहिए। यदि आप परमेश्वर की सेवा कर रहें हैं तो सच्चे मन से उसका कार्य करें तभी वह आपको जीवन का मुकुट देगा। (प्रकाशित 2:10)। क्या आप कलीसिया में अगुवाई करते हैं? या किसी भी रूप में अपनी सेवा उसके प्रति दे रहे हैं। यदि ऐसा है तो आप सच्चे मन से उसकी सेवा करे तब वह आपको बहुतायत से आशिषित करेगा।

जीवन के मोड़ पर

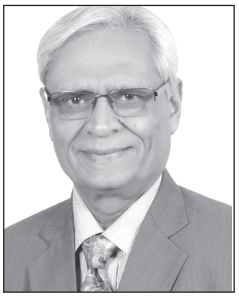

सनी डेविड

बाइबल में हम बहुतेरे लोगों के बारे में पढ़ते हैं, जिनके जीवनों से हम भांति-भांति की अनेकों शिक्षाएं सीखते हैं। हम आज्ञा मानने वाले नूह के बारे में देखते हैं, विश्वासी इब्राहीम के बारे में देखते हैं और परमेश्वर पर भरोसा रखने वाले दानिय्येल के बारे में देखते हैं। परन्तु आज हम बाइबल में मूसा नाम के एक व्यक्ति के बारे में देखेंगे।

मूसा के बारे में एक जगह लिखा है कि "विश्वास ही से मूसा ने सयाना होकर फिरौन की बेटी का पुत्र कहलाने से इंकार किया। इसलिये कि उसे पाप में थोड़े दिन के सुख भोगने से परमेश्वर के लोगों के साथ दुख भोगना और उत्तम लगा। और मसीह के कारण निंदित होने को मिसर के भंडार से बड़ा धन समझा। क्योंकि उसकी आंखे फल पाने की ओर लगी थीं। विश्वास ही से राजा के क्रोध से न डरकर उसने मिसर को छोड़ दिया, क्योंकि वह अनदेखी को मानो देखता हुआ दृढ़ रहा।" (इब्रानियों 11:24-27)। मूसा के बारे में यह वर्णन उसके जीवनकाल के लगभग 1500 वर्ष बाद लिखा गया, परन्तु यह पाठ आज भी हमारे लिये बड़ा ही आवश्यक और शिक्षाप्रद है।

मूसा का जन्म एक ऐसी जाति के बीच में हुआ था जो उसे समय मिसर देश में बंधुवाई में थी। उस जाति का नाम इस्राएल था। सैंकड़ों वर्ष पूर्व जब इस्राएलियों के पूर्वज मिसर में आकर बसे थे तो उस समय वहां का राजा, जो फिरोन कहलाता था, उनसे प्रसन्न था और इस्राएली लोग मिसर में बढ़ने और फूलने लगे। परन्तु बहुत समय बीतने पर जब एक नया फिरौन राजगद्दी पर बैठा तो उसे डर लगने लगा कि कहीं इस्राएली इतने अधिक न बढ़ जाएं कि शक्तिशाली होकर मिसर को अपने हाथ में कर लें। सो फिरौन ने उन्हें बंधुवाई में ले लिया, और उनके अधिकारों को उनसे छीन लिया, और उन पर अत्याचार होने लगे। इस्राएलियों की बढ़ती हुई जनसंख्या को रोकने के लिये फिरौन ने एक कानून बनाया कि यदि उनके यहां लड़का उत्पन्न हो तो उसे तत्काल मरवा दिया जाए। सो जबकि इस्राएलियों के साथ इस प्रकार का कठोर व्यवहार किया जा रहा था, उन्हीं दिनों में मूसा का जन्म हुआ। वह बालक देखने में अति सुन्दर था, परन्तु उसकी माता जानती थी कि शीघ्र ही एक दिन वह फिरौन के सिपाहियों की तलवार का कौर हो जाएगा। जैसे-तैसे करके उसने तीन महीने तक उसे छिपाकर रखा, परन्तु जब उसने जान लिया कि अब और वह उसे नहीं छिपा सकती, तो उसने सरकन्डों की एक टोकरी लेकर उसमें बालक को रखकर, टोकरी को नील नाम की नदी में छोड़ दिया। और उस बालक की बहिन दूर खड़ी होकर देखने लगी कि उस टोकरी का क्या होगा? कुछ ही समय बाद, फिरौन की बेटी अपनी सखियों के साथ नील नदी के तीर पर आई। टोकरी

को देखकर उसने अपनी सखियों से उसे ले आने को कहा। और जब उसने टोकरी को खोलकर देखा तो उसमें एक सुन्दर बालक पड़ा था, उसे उस पर बड़ा तरस आया, और उसने उस बालक को अपने साथ घर ले जाने का निश्चय किया। उस बालक की बहिन, जो दूर खड़े होकर यह सब कुछ देख रही थी, फिरौन की बेटी के पास आई और उस ने पूछा, यदि उसे बालक की देखभाल करने के लिये किसी स्त्री की आवश्यकता है? और उसके हां कहने पर, वह अपने घर गई और अपनी मां को सब हाल कह सुनाया और बालक की माता ही को उसकी देखभाल करने को बुला लाई। सो इस प्रकार मूसा का पालन-पोषण अपनी ही माता के हाथों फिरौन के महल में होने लगा।

परन्तु जब मूसा बड़ा हुआ, तो उसे पता चला कि वह स्वयं एक इस्राएली है, और अपने भाइयों के ऊपर घोर अत्याचार होते देखकर उसे बड़ा कष्ट हुआ। एक दिन उसने देखा कि एक मिसरी जन उसके एक इस्राएली भाई को मार रहा है, यह वह सहन न कर सका, और उसने उस मिसरी को मारकर बालू में छिपा दिया। अब मूसा अपने जीवन के एक ऐसे मोड़ पर खड़ा था जहां उसे यह निश्चय करना था, कि या तो वह अपने भाइयो के साथ दुख भोगे और या फिरौन की बेटी का पुत्र राजमहल में सुख के साथ रहे। परन्तु मूसा जानता था कि उसकी कौम परमेश्वर के लोग है, और मिसरी उन्हें सताकर अन्याय और पाप कर रहे हैं, तो उसने पाप में थोड़े दिन के सुख भोगने से परमेश्वर के लोगों के साथ दुख भोगना चुन लिया। वह मिसर को छोड़कर वहां से निकलकर एक अन्य देश में जा बसा। वास्तव में, मूसा के लिये यह एक बड़ा ही कठिन निश्चय था। एक ओर तो राजा की बेटी का पुत्र होने के कारण उसे सारे सुख और अधिकार प्राप्त थे, परन्तु दूसरी ओर, फिरौन की बेटी का पुत्र कहलाने से इंकार करने पर, न केवल उससे सारे सुख और अधिकार ही छिन जाते परन्तु वह बंधुवाई में ले लिया जाता और अपने प्राणों को भी कदाचित् खो सकता था। परन्तु उसे दोनों में एक हो चुनना आवश्यक था; वह एक ऐसे दो-राहे पर था जहां उसे एक मोड़ लेना आवश्यक था, अर्थात् या तो मिसर का सुख और या परमेश्वर के लोगों के साथ दुख। किन्तु प्रत्येक निश्चय को करने से पहिले उसका अंजाम सोच लेना बेहतर है; हरएक मोड़ पर मुड़ने से पहिले उसके अंत पर विचार कर लेना बुद्धिमानी है। सो मूसा ने मार्ग के आरंभ पर ही नहीं परन्तु उसके अन्त पर भी विचार किया। और मसीह के कारण निंदित होने का मिसर के भंडार से बड़ा धन समझा: क्योंकि उसकी आंखे फल पाने की ओर लगी थी... क्योंकि वह अनदेखी को मानो देखता हुआ दृढ़ रहा।" (इब्रानियों 11:26, 27)।

अकसर, इसी प्रकार हमारे सामने भी कुछ ऐसे निश्चय आते है जिन्हें करना हमारे लिये बड़ा ही आवश्यक होता है। भौतिक या सांसारिक दृष्टिकोण के किसी निश्चय को तो शायद हम दूर-दृष्टि के साथ करे; परन्तु अकसर देखा जाता है कि आत्मिक दृष्टिकोण के निश्चय को मनुष्य दूर-दृष्टि के साथ नहीं परन्तु वर्तमान को ध्यान में रखकर करता है। अर्थात् हम मार्ग के अन्त पर नहीं परन्तु आरंभ पर ध्यान देते है, यदि उस मार्ग पर आरंभ में सुख वा आनन्द है, तो उसके अंत पर ध्यान

किए बिना उस पर चल पड़ते है। एक बार एक धनी व्यक्ति जब प्रभु यीशु के पास उद्धार का मार्ग जानने के लिये आया, तो वह यह सुनकर बड़ा ही उदास हुआ कि उद्धार पाने के लिये उसे सबसे पहिले अपने धन का लोभ और मोह छोड़ना पड़ेगा। (मत्ती 19:21, 22)। यीशु ने यह निश्चय उसके सामने रखकर उसे एक दो-राहे पर लाकर खड़ा कर दिया। एक ओर तो उसके पास धन सुख और आनन्द था, और दूसरी ओर उसके सामने यह चुनौती थी कि वह उस सबसे इंकार करके प्रभु के पीछे हो ले और अंत में उस बड़े स्वर्गीय धन का वारिस बने जो प्रभु अपने लोगों को सौपेंगा। परन्तु वह मनुष्य इतने समय तक प्रतीक्षा नहीं करना चाहता था, उसे भविष्य की नहीं परन्तु अपने वर्तमान की चिंता थी, उसने रास्ते के अन्त पर नहीं परन्तु आरंभ पर विचार किया; और वह प्रभु की बात सुनकर उदास होकर चला गया।

कभी-कभी मेरे पास ऐसे लोगों के पत्र आते है जो परमेश्वर के मार्ग पर चलकर अपनी आत्मा का उद्धार प्राप्त करना चाहते है, वे स्वर्ग के द्वार के बहुत निकट है, परन्तु तौभी उससे लाखों मील दूर है, क्योंकि वे कुछ त्यागना नहीं चाहते, देना नहीं चाहते। वे सोचते हैं कि वे संसार की प्रत्येक वस्तु को भी प्राप्त कर ले और स्वर्ग के धन के भी वारिस बन जाएं। परन्तु यह असंभव है। जी हां, यह बिल्कुल असंभव है। आप एक ही समय दो रास्तों पर नहीं चल सकते। किसकी आज्ञा आपके निकट अधिक महत्वपूर्ण है, प्रभु की या मनुष्य की? किसकी इच्छा को आप अधिक महत्व देते हैं, प्रभु की या अपनी? कौन-सा धन आपको अधिक प्रिय है, सांसारिक या स्वर्गीय? कैन-सा आनन्द आप प्राप्त करना चाहते है, आप में रहकर थोड़े से समय का या परमेश्वर की इच्छा पर चलकर हमेशा का?

जी हां, आप एक दो-राहे पर है। आपको अपने जीवन का निश्चय करने वाला मोड़ लेना आवश्यक है। आप दो रास्तों पर एक ही साथ नहीं चल सकते, आपको एक को त्यागना और दूसरे को स्वीकार करना आवश्यक है। प्रभु यीशु ने कहा, 'सकेत फाटक से प्रवेश करो, क्योंकि चौड़ा है वह फाटक और चाकल है वह मार्ग जो विनाश को पहुंचाता है और बहुतेरे हैं जो उससे प्रवेश करते है। क्योंकि सकेत है वह फाटक और संकरा है वह मार्ग जो जीवन को पहुंचाता है, और थोड़े हैं जो उसे पाते है।" (मत्ती 7:13, 14)। चौड़े फाटक का, विनाश को पहुंचाने वाला, चाकल मार्ग वह मार्ग है जो संसार का मार्ग है, जिस पर अधिकांश लोग चलना पसंद करते है। परन्तु सकेत फाटक का, जीवन को पहुंचाने वाला, सकरा मार्ग परमेश्वर का मार्ग है, और इसलिये इस मार्ग पर पाप को साथ लेकर नहीं चला जा सकता।

और परमेश्वर का मार्ग प्रभु यीशु मसीह है। उसने कहा, मार्ग और सच्चाई और जीवन मैं ही हूं; बिना मेरे द्वारा कोई पिता के पास नहीं पहुंच सकता।" (यूहन्ना 14:6) प्रभु यीशु न केवल परमेश्वर तक पहुंचाने वाला मार्ग ही है, परन्तु वह हमारा उद्धारकर्ता भी है। उसने मनुष्य को पाप से बचाने के लिये अपने प्राणों को बलिदान करके अपना पवित्र लोहू बहाया। यदि आप यीशु के बलिदान में विश्वास करेंगे और उसे अपने उद्धारकर्ता के रूप में स्वीकार करेंगे और अपने पापों से मन फेरकर

उसकी आज्ञानुसार अपने पापों की क्षमा के लिये बपतिस्मा लेगें, तो यीशु आपका उद्धार करेगा; वह आपको स्वर्गीय आनन्द और हमेशा की जिंदगी देगा। मेरी आशा है कि आप मार्ग के आरंभ को देखकर नहीं परन्तु उसके अंत पर विचार करके अपना निश्चय करेंगे। परमेश्वर आपकी सहायता करे।

बाईबल परमेश्वर का वचन है

जे. सी. चोट

अपने इस अध्ययन में हम बाईबल के विषय में देखेंगे कि बाईबल परमेश्वर का वचन है। क्या आप यह विश्वास करते हैं कि बाइबल परमेश्वर का वचन है? आपके पास शायद बाइबल या नया नियम होगा। मेरी आशा है कि आप यह विश्वास करते हैं कि बाइबल परमेश्वर द्वारा प्रेरित किया हुआ उसका वचन है।

आज हम एक ऐसे संसार में रहते हैं जहां लोग अपने बनाने वाले सृष्टिकर्ता पर भी विश्वास नहीं करते। और बहुत से ऐसे लोग भी हैं जो यह विश्वास नहीं करते कि यीशु परमेश्वर का पुत्र है। बाइबल संसार में सबसे अधिक बिकने वाली पुस्तक है। इसका संसार की कई भाषाओं में अनुवाद भी हो चुका है। इसको पढ़ने के द्वारा आपको बहुत सी जानकारियां मिल सकती है जैसे कि संसार की सृष्टि, मनुष्य का पृथ्वी पर क्या उद्देश्य है। बाइबल कोई कथा-कहानियों की पुस्तक नहीं है। इसमें जो भी बातें लिखी हुई है वे सब तर्क के साथ हैं। इसमें बताया गया है कि पापी मनुष्य को किस प्रकार से पापों से मुक्ति मिल सकती है।

बाइबल हमें यह भी बताती है कि मनुष्य का व्यवहार दूसरों के प्रति कैसा होना चाहिए? बाइबल की एक विशेषता यह भी है कि यह किसी मनुष्य की केवल अच्छाईयां ही नहीं बल्कि बुराई भी बताती है तथा हम यह भी जान सकते हैं कि किस प्रकार से मनुष्य बुराई को छोड़कर परमेश्वर के पास आ सकता है। यह पुस्तक हमें बताती है कि किस प्रकार से परमेश्वर ने पापी मनुष्य के लिये अपने पुत्र यीशु को इस संसार में भेजा था ताकि मनुष्य को उसके पापों से उद्धार दिला सके। यह बताती है कि मनुष्य के मरने के बाद भी आश अनन्त जीवन की उसके पास है। पूरे संसार में इसके जैसी कोई पुस्तक नहीं है।

पमरेश्वर ने मनुष्य की रचना की और उसे रहने के लिये यह संसार दिया। उसने मनुष्य पर अपनी इच्छा व्यक्त की है। इब्रानियों का लेखक हमें बताता है ''पूर्व युग में परमेश्वर ने बाप-दादों से थोड़ा-थोड़ा करके और भांति-भांति से भविष्यदूक्ताओं के द्वारा बातें करके, इन दिनों के अन्त में हम से पुत्र के द्वारा बातें की जिसे उसने सारी वस्तुओं का वारिस ठहराया है और उसी के द्वारा उसने सारी सृष्टि रची है। (इब्रा. 1:1-2)। इसका अर्थ है कि समय-समय पर परमेश्वर ने मनुष्य से भांति-भांति तरीके से बातचीत की थी। आज वह हमसे अपने नये नियम के द्वारा

बातें करता है।

पतरस हमें बताता है परमेश्वर के वचन के विषय में कि, ''कोई भी भविष्यवाणी मनुष्य की इच्छा से कभी नहीं हुई पर भक्त जन पवित्र आत्मा के द्वारा उभारे जाकर परमेश्वर की ओर से बोलते थे।'' (2 पतरस 1:21)। यहां पतरस यह कह रहा है कि जो भी बाइबल में लिखा है वो सब परमेश्वर की ओर से है। यह वचन परमेश्वर की सामर्थ से लिखा गया है। हमें इसमें विश्वास करके इसकी आज्ञाओं को मानना है।

प्रेरित पौलुस कहता है, ''हर एक पवित्र शास्त्र परमेश्वर की प्रेरणा से लिखा गया है और उपदेश, समझाने, सुधारने और धर्म की शिक्षा के लिये लाभदायक है। ताकि परमेश्वर का जन-सिद्ध बने, और हर एक भले काम के लिये तत्पर हो जाए।'' (2 तीशु. 3:16-17) पतरस ने लिखा था, ''क्योंकि उसके ईश्वरीय सामर्थ ने सब कुछ जो जीवन और भक्ति से संबंध रखता है, हमें उसी की पहचान के द्वारा दिया है जिसने हमें अपनी ही महिमा और सदगुण के अनुसार बुलाया है।'' (2 पतरस 1:3)। इस सबसे हमें यह पता चलता है कि परमेश्वर ने हमें अपना वचन दिया है। परमेश्वर ने अपने वचन को प्रेरणा से लिखवाया है।

जब यीशु इस संसार में आया तब वह परमेश्वर का प्रवक्ता बना। हम पढ़ते हैं, ''आदि में वचन था, और वचन परमेश्वर के साथ था, और वचन परमेश्वर था। सब कुछ उसी के द्वारा उत्पन्न हुआ और जो कुछ उत्पन्न हुआ है, उस में से कोई भी वस्तु उसके बिना उत्पन्न न हुई।'' (यूहन्ना 1:1-3)। यीशु को वचन कहा गया है जो आदि से उसके साथ था। इसलिये हम देखते हैं कि परमेश्वर ने कहा था, यह मेरा प्रिय पुत्र है, जिससे मैं प्रसन्न हूं, इसकी सुनो, (मत्ती 17:5)। यीशु ने कहा था, ''आकाश और पृथ्वी टल जाएंगे, परन्तु मेरी बातें कभी न टलेगी (मत्ती 24:35)।

परन्तु बाइबल मनुष्य के पास कैसे आई? जैसे कि हमने पहिले भी देखा था कि पवित्र आत्मा की अगुवाई के द्वारा इसे लिखवाया गया। पवित्र आत्मा के द्वारा पवित्र लोगों ने इसे लिखा। इसको लिखने वाले थे, मत्ती, मरकुस, लूका और यूहन्ना तथा पौलुस पतरस की तरह पवित्र आत्मा से उभारे जाकर लोगों ने इसे लिखा था। नया नियम ग्रीक या यूनानी भाषा में लिखा गया था। आज यह हमारी भाषा में हमें उपलब्ध है।

बाइबल का अर्थ है एक पुस्तक। परमेश्वर ने अपने वचन को आरंभ से सुरक्षित रखा था। आज परमेश्वर सीधे मनुष्य से बात नहीं करता, बल्कि अपने वचन के द्वारा बात करता है। यूहन्ना ने इस प्रकार से लिखा था, ''यीशु ने और भी बहुत चिन्ह चेलों के सामने दिखाए, जो इस पुस्तक में लिखे नहीं गए। परन्तु ये इसलिये लिखे गए हैं, कि तुम विश्वास करो कि यीशु ही परमेश्वर का पुत्र है और विश्वास करके उसके नाम से जीवन पाओ। (यूहन्ना 20:30-31)। प्रेरित पौलुस ने लिखा है, ''सो विश्वास सुनने से और सुनना मसीह के वचन से होता है।'' (रोमियों 10:17)।

जबकि बाइबल परमेश्वर का वचन है तब हमें इसे स्वीकार करना चाहिए। इसमें जोड़ना या घटाना नहीं है (प्रकाशित 22:18-19)। यह परमेश्वर की हमारे लिये एक पूर्ण और सिद्ध इच्छा है। इसे पढ़िये और इसका अच्छे मन से अध्ययन कीजिये। यीशु के बलिदान के विषय में, सुसमाचार, कलीसिया क्या है तथा मसीही जीवन के विषय में यह हमें बताती है। यह एक अद्‌भुत पुस्तक है। इसी के द्वारा अन्त में हमारा न्याय होगा। (यूहन्ना 12:48)। क्या आप बाइबल में विश्वास करते हैं?

झूठी निंदा

रॉयस फ्रेड्रिक

"धन्य हो तुम, जब मनुष्य मेरे कारण तुम्हारी निंदा करें, और सताएं और झूठ बोल बोलकर तुम्हारे विरोध में सब प्रकार की बुरी बात कहें। तब आनन्दित और मगन होना, क्योंकि तुम्हारे लिये स्वर्ग में बड़ा फल है। इसलिये कि उन्होंने उन भविष्यद्वक्ताओं को जो तुम से पहले थे इसी रीति से सताया था। परन्तु मैं तुम से यह कहता हूं कि अपने बैरियों से प्रेम रखो और अपने सताने वालों के लिये प्रार्थना करो।" (मत्ती 5:11, 12, 44)।

हम कभी दूसरों पर दोष न लगाए। दोष लगाना शैतान का हथियार है। (प्रकाशित वाक्य 12:10) यह परम मित्रों को अलग कर देता है (नीतिवचन 16:28; 17:9), परमेश्वर के क्रोध का कारण बनता है (नीतिवचन 6:19), और दोनों नियमों में इसे पाप ठहराया गया है (निर्गमन 23:1; लैव्यवस्था 19:16; रोमियों 1:29, 30; याकूब 4:11)। हम दोष लगाने को दूर करें (इफिसियों 4:31) और किसी को बदनाम न करें (तीतुस 3:2) हमें अपने हर शब्द का हिसाब देना होगा (मत्ती 12:36) हम निष्कर्ष निकालने में उतावली न करें और न ही ऐसी कोई बात करें जिसका हमें पूरा यकीन न हो।

अपनी ज़बान की अगुआई बड़ी सावधानी से करें। बोलने से पहले हमें अपने आप से यह पूछना चाहिए "क्या यह सच है? क्या यह सहायक है? क्या यह आवश्यक है?" हर बात में जो हम बोलते हैं हमें इस सुनहरे नियम का इस्तेमाल करना चाहिए, "क्या दूसरे अगर मेरे बारे में ऐसा ही बोलें तो मुझे अच्छा लगेगा?" (मत्ती 7:12)। अगर हमारा भाई हमारे विरूद्ध पाप करता है तो हम उसे बचाने के लिए, न कि उसे अपमानित करने के लिए, पहले अकेले में उससे बात करें (मत्ती 18 : 15-17)।

दोष लगाने की बात पर ध्यान न दें। बुरी कहानियों को भूखे कानों की तलाश रहती है जैसे लकड़ी न होने से आग बुझती है, उसी प्रकार जहां काना फूसी करने वाला नहीं, वहां झगड़ा मिट जाता है (नीतिवचन 26:20)। हमें किसी दोष लगाने वालों को न तो अपने कानों का इस्तेमाल करने देना चाहिए और न ही अपनी जीभ को दोष को फैलाने के लिए इस्तेमाल करना चाहिए। दूसरों के पापों में भागी न हो। बल्कि अपने आपको पवित्र बनाए रखें। (1 तीमुथियुस 5:22)। प्रेम से भाइयों का

बचाव होता है और उनके बेहतरीन व्यवहार पर विश्वास करता है (1 कुरिन्थियों 13:4-7)। सब में श्रेष्ठ बात यह है कि एक दूसरे से अधिक प्रेम रखो, क्योंकि प्रेम अनेक पापों को ढांप देता है। (1 पतरस 4:8)।

दोष लगाने से निराश न हो। जब तक हम सही करने की कोशिश कर रहे हैं तब तक संसार को लगेगा कि हम अजीब हैं और हमारे बारे में बुरा ही बोलेगा (1 पतरस 4:4; यूहन्ना 15:18-20; 2 तीमुथियुस 3:12)। यदि कोई आप पर दोष लगाता है तो यह जान लें कि आप (अय्यूब 1:9-11; 4:3), (उत्पत्ति 39: 14-1, 8), मूसा (गिनती 16:3, 13), (यिर्मयाह 18:18), यीशु (यूहन्ना 5:18; 8:48, 52; 10:20), स्तिफनुस (प्रेरितों 6:11, 13), और पौलुस (रोमियों 3:8; 2 कुरिन्थियों 6:6) की अच्छी संगति में है। दोष लगाने वालों से प्रेम करें, उनके लिए प्रार्थना करें, उनका भला करें, और उन्हें क्षमा करें (मत्ती 5:44; 6:12-15; रोमियों 12:14, 17-2, 1; 1 कुरिन्थियों 4:12, 13) वे भी आत्माएं हैं और याद रखें कि यदि हम प्रभु के झूठे आरोपों को सहते हैं तो स्वर्ग में हमारे लिए बड़ा प्रतिफल मिलने वाला है (मत्ती 5:11, 12; 1 पतरस 4:14)।

सही जीवन जीएं ताकि दूसरों को दोष लगाने पर विश्वास न हो। हमें चाहिए कि "किसी विरोधी को बदनाम करने का अवसर न दें।" (1 तीमुथियुस 5:14)। सुनिश्चित करो कि विवेक भी शुद्ध रखो, इसलिये कि जिन बातों के विषय में तुम्हारी बदनामी होती है, उनके विषय में वे जो मसीह में तुम्हारे अच्छे चाल-चलन का अपमान करते हैं, लज्जित हो (1 पतरस 3:16)। हे प्रियो, मैं तुम से विनती करता हूं कि तुम अपने आपको परदेशी और यात्री जानकर उन सांसारिक अभिलाषाओं से जो आत्मा से युद्ध करती हैं, बचे रहो। अन्य जातियों में तुम्हारा चालचलन भला हो; ताकि जिन-जिन बातों में वे तुम्हें कुकर्मी जानकर बदनाम करते है, वे तुम्हारे भले कामों को देखकर, उन्हीं के कारण कृपा दृष्टि के दिन परमेश्वर की महिमा करें।" (1 पतरस 2:11, 12)। अभी-अभी ख़बर मिली है कि भाई रॉयस की 29 जनवरी को कोरोना से मृत्यु हो गई है।

प्रयत्न करने में आलसी न हो

डैरल रैमसे

"प्रयत्न करने में आलसी न हो; आत्मिक उन्माद में भरे रहो; प्रभु की सेवा करते रहो" (रोमियों 12:11) पौलुस यहां पर मसीह लोगों को इस प्रकार से रहने के लिए कुछ साधारण सलाह दे रहा था जिससे मसीह के नाम को आदर मिले। मसीही लोगों को हमें संसार के लिए नमूने यानी पहाड़ी पर बसा हुआ नगर बनना आवश्यक है। यह बहुत आवश्यक है कि हमारा दैनिक आचरण निंदा से परे हो।

कारोबार जगत में यह आवश्यक है कि मसीही लोग ईमानदारी से काम करें, घूस या रिश्वत न लें, अपना आयकर ईमानदारी से भरे, अपने नियोक्ताओं के लिए ईमानदारी से काम करें इत्यादि। एक सच्चा मसीही अपने काम में कभी आलसी

नहीं होगा। मसीही व्यक्ति ईमानदार बनने के लिए सही काम नहीं करता बल्कि इसलिए करता है कि वह ईमानदार है।

हमारी प्रतिदिन की बोलचाल की भाषा में हमें सुस्त नहीं होना चाहिए। सुस्त कर्मचारी अपने नियोक्ता से छल करता है, आलसी माता-पिता अपने बच्चों के अनुशासन में कोताही करते है; आलसी भूस्वामी अपनी सम्पत्ति की देख रेख में कोताही करता है। असल में आलसी लोग अच्छे मसीही नहीं होते बल्कि संसार को यह बताते हैं कि वे जीवन से उकता गए हैं और उनमें कोई जोश नहीं है और वे किसी की परवाह नहीं करते।

आलसी लोगों के कारण दूसरों को कठिन काम करना पड़ता है क्योंकि किसी न किसी के द्वारा तो उस काम को किया जाना आवश्यक होता है। किसी टीम को आलसी सदस्य नहीं चाहिए।

प्रभु की सेवा करते रहो। यह सीधे-सीधे उन लोगों से बात करता है जो जिम्मेदारी को मानने को तैयार नहीं है। कई बार हम कलीसिया की मण्डलियों में ऐसा देखते हैं। शायद कोई प्रतिभावना शिक्षक है जो इसलिए सिखाने से मना कर देता है क्योंकि उसको प्रयास करना पड़ेगा और उसका अधिक समय लगेगा। किसी काम के लिए तैयार करने के वजाय उसे छोड़ देना आसान होता है। आलस जब दूसरों में दिखाई दे तो गुस्सा दिलाता है, परन्तु क्या कई बार हम खुद भी उतने ही दोषी होते हैं? आलस का मसीह के मन से कोई मेल नहीं है। पतरस ने कहा कि यीशु ने हमारे मानने के लिए एक आदर्श दे दिया। (1 पतरस 2:21) और क्या आप किसी भी समय, किसी भी कारण मसीह के आलसी होने की कल्पना कर सकते हैं? एक अवसर पर उसने कहा था, "जिसने मुझे भेजा है, हमें उसके काम दिन ही दिन में करना अवश्य है; वह रात आने वाली है जिसमें कोई काम नहीं कर सकता (यूहन्ना 9:4) उसने यह भी कहा, मेरा पिता अब तक काम करता है और मैं भी काम करता हूं (यूहन्ना 5:17)। बहुत सी बातें हैं जिन लोगों पर आलसी या सुस्त होने का ठप्पा लगता है। आमतौर पर वे कलीसिया में आने, दिलचस्पी दिखाने और चंदा देने में अनियमित होते है। हमकों मसीही कहा जाता है जिनमें से सक्रिय सामग्री निकाल ली गई हो। फिर उनमें आत्माओं को बचाने में बहुत कम दिलचस्पी होती है क्योंकि इसके लिए अपने पड़ोसियों को मसीह के लिए बताने के लिए बहुत अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है। वे परमेश्वर के वचन का अध्ययन करने में बहुत कम समय बिताते है। वे सिवाय किसी संकट के, और प्रार्थना के झंझट में नहीं पड़ते, और चूक का पाप करते हैं। अफ़सोस है कि बहुत से लोग पूरी कलीसिया को आलसी सदस्य की तरह ही मानते हैं।

आलसी मसीहीयों की एक प्रमुख विशेषता आराधना सेवा में लेट आने की आदत है। उनका लेट आना आमतौर पर अन्य आराधकों का ध्यान भंग कर देता है। इन्हीं लोगों को यदि फुटबाल की गेम में जाना हो या बॉस्केटबॉल की गेम में या क्रिकेट में तो वे पहले ओवर को मिस नहीं करना चाहेंगे।

आलसी धर्म मुर्दा धर्म है। "हे मेरे भाइयो, यदि कोई कहे कि मुझे विश्वास है कि वह कर्म न करता हो, तो उसके क्या लाभ? क्या ऐसा विश्वास कभी उसका

उद्धार कर सकता है? वैसे ही विश्वास भी, यदि कर्म सहित न हो तो अपने स्वभाव में मरा हुआ है (याकूब 2:14,17)। हर प्रतिभा, हर अवसर के साथ जिम्मेदारी होती है। परन्तु जो नहीं जानकर मार खाने के योग्य काम करे वह थोड़ी मार खाएगा। इसलिये जिसे बहुत दिया गया है, उससे बहुत मांगा जाएगा; और जिसे बहुत सौंपा गया है, उससे बहुत लिया जाएगा (लूका 12:48)। बाइबल चेतावनी देती है कि जो लोग भला करना चाहते हैं और वे नहीं करते उन्हें अनन्त दण्ड में भेजा जाएगा। और जो कुछ तुम करते हो, तन मन से करो, यह समझ कर कि मनुष्यों के लिए नहीं परन्तु प्रभु के लिए करते हो। (कुलुस्सियों 3:23)। इसका अर्थ यह हुआ कि प्रभु का किए जाने वाला कोई भी काम दिल से होना चाहिए।

स्त्री की भूमिका क्या है?

बैटी बर्टन चोट

स्त्री मनुष्य की सृष्टि का आधा भाग है, इस कारण स्पष्ट है कि उसका महत्व है, और जीवन में उसकी भूमिका महत्वपूर्ण है। परमेश्वर ने कुछ जिम्मेदारियां पुरुषों को दी और अन्य जिम्मेदारियां स्त्रियों को दी गई है। अपने काम को सही ढंग से करना दोनों के लिए आवश्यक है, ताकि सब कुछ ठीक हो जाए और किसी को भी परेशानी न हो। परेशानी तब आती है जब पुरुषों या स्त्रियों में से कोई अपने काम की उपेक्षा करता है और उसके बजाय दूसरे का काम करने के लिए सीमा लांघने की कोशिश करता है।

परमेश्वर के सामने जिम्मेदारी के चार क्षेत्र हैं (1) विवाह में, (2) घर में, (3) कलीसिया में, (4) समाज में। यदि स्त्रियां इनमें से किसी भी क्षेत्र में अपने काम की अनदेखी करती हैं तो सभी क्षेत्र प्रभावित होंगे।

विवाह में

पति को पत्नी का सिर, प्रबंध करने वाला और संरक्षक होने की जिम्मेदारी दी गई है। इफिसियों 5:25, 28, 29 बताता है कि पति अपनी पत्नी से वैसे ही प्रेम करे जैसे वह अपनी देह से करता है, वैसे ही जैसे मसीह ने कलीसिया से किया कि उसने उसकी भलाई के लिए अपने आपको बलिदान कर दिया। यदि कोई पुरुष अपनी पत्नी से इस कदर प्रेम करता है तो उसकी रक्षा और उसके पालन-पोषण के लिए यह समर्पण होना एक मजबूत और टिकाऊ परिवार का आधार बन जाएगा।

परमेश्वर द्वारा दी गई इस लीडरशिप का अर्थ यह नहीं है कि पति अपनी पत्नी के साथ मारपीट या गाली-गलौच करने वाला हो। कुछ पुरुष क्रोध आने पर अपनी पत्नियों की पिटाई कर देते हैं। कुछ पुरुष अपनी पत्नियों के साथ गुलामों जैसा व्यवहार करते हुए उन से हर काम करवाने की उम्मीद रखते हैं। जबकि उनके स्वास्थ्य या सुविधाओं का कोई ध्यान नहीं रखते। कुछ पति अपनी पत्नियों को यह जानते हुए कि वे अनपढ़ गंवार हैं, उनके विचार किसी काम के नहीं है, उनके साथ दुर्व्यवहार करते हुए गाली गलौच करते हैं और अपने इस व्यवहार को वे इस आधार

पर उचित ठहराते हैं कि वे मर्द हैं और परमेश्वर ने उन्हें स्त्रियों के ऊपर अधिकार दिया है। परन्तु मसीही पुरुषों के व्यवहार और तर्क के लिए परमेश्वर का यह इरादा बिल्कुल नहीं था। यह पाप है और गलत है और अपने दबाव के लिए स्त्रियों को पापपूर्ण ढंग से जवाब देने के लिए उकसाता है।

विचार करने वाली बात

यदि कोई मसीही पुरुष और स्त्री पवित्र शास्त्र में पति-पत्नी व मसीह और कलीसिया के बीच बनाई गई सुन्दर और बहुत व्यावहारिक समानता को ध्यान में रखते तो परमेश्वर की इच्छा के अनुसार एक दूसरे के साथ व्यवहार करना आसान हो जाएगा। इस समानता से अपने पतियों के साथ संबंधों में आने वाले बदलावों पर चर्चा करें।

किसी भी मसीही स्त्री को कभी यह नहीं लगना चाहिए कि उसे अपने पति से अपने आपको बचाने या उससे रक्षा की आवश्यकता है। क्या कलीसिया को कभी मसीह से बचाव या रक्षा की आवश्यकता लगी है? मसीही पति का प्रेम और लीडरशिप वैसा ही है जैसा वह मसीह में देखता है।

पत्नी का काम अपने पति की लीडरशिप को अधीनता से मानते हुए उसका आदर करना है। उसे उसकी भौतिक, भावनात्मक और यौन आवश्यकताओं को पूरा करना है ताकि वह जीवन के इन क्षेत्रों में से किसी में भी परीक्षा में न पड़े। 1 कुरिन्थियों 7:2-5 में निर्देश दिए गए है: "व्यभिचार के डर से हर एक पुरुष की पत्नी, और हर एक स्त्री का पति हो। पति अपनी पत्नी का हक्क पूरा करे; और वैसे ही पत्नी भी अपने पति का। पत्नी को अपनी देह पर अधिकार नहीं पर उसके पति का अधिकार है; वैसे ही पति को अपनी देह पर अधिकार नहीं, परन्तु पत्नी को। तुम एक दूसरे से अलग न रहो; परन्तु केवल कुछ समय तक आपस की सम्मति से कि प्रार्थना के लिए अवकाश मिले, और फिर एक साथ रहो, ऐसा न हो, कि तुम्हारे असंयम के कारण शैतान तुम्हें परखे।"

पत्नी के लिए अपने पति की खामियों को पूरा करते हुए उसकी "सहायक" बनना आवश्यक है। कई बार उसमें लीडरशिप की सामर्थ की कमी होती है। ऐसे में पत्नी के लिए आवश्यक है कि उसे पीछे धकेलकर अगुआई अपने हाथ में लेते हुए उसे परिवार के प्रमुख के रूप में बढ़ने के लिए प्रोत्साहन और सहायता दे।

हर बात का हल किसी के पास नहीं होता और न किसी के भी पास हर सवाल का जवाब होता है। सोच विचार करने और निर्णयों में अगुआई के लिए परमेश्वर से प्रार्थना करने के साथ-साथ सब बातों में जिनमें पत्नी को कोई जानकारी हो, बात करना, विचार करना, पति और पत्नी दोनों के लिए सहायक होता है। इसका अर्थ यह हुआ कि इन बातों पर विचार के आधार पर निर्णय लेने की जिम्मेदारी पति की और इसे लागू करने के लिए इसे मानने और उसके साथ सहयोग करने की जिम्मेदारी पत्नी की है। अधिकार का यह सिस्टम परमेश्वर का दिया हुआ है और इसलिए हम जानते हैं कि यह बाइबल के इस ढंग से लिए गए निर्णयों को आशीषित कर सकता है।

विचार करने वाली बात

यदि पति पत्नी निर्णयों और समस्याओं पर चर्चा करते हैं और पत्नी कोई तर्क और परामर्श देती है तो क्या यह उसे अपने पति के अधिकार को छीनना माना जाएगा? पति यदि अपनी पत्नी की सलाह को सुनकर उसके निर्णय के आधार पर फैसला करता है तो क्या पति लीडरशिप की अपनी भूमिका को छोड़ रहा होगा?

क्या पत्नी के लिए यह जोर देना उचित होगा कि फैसला उसके निर्णय के अधिकार पर ही हो? क्या फैसला लेने के बाद में पति को यह लगने लगे कि यदि वह ऐसा न करता तो ठीक होना था, क्या आरोप पत्नी पर लगाने की कोशिश करना उचित होगा? पति और पत्नी के बीच विवाह में एक दूसरे पर आरोप लगाने से क्या होगा?

कई बार अलग-अलग पृष्ठभूमियों के कारण या अलग-अलग योग्यताओं के कारण हो सकता है कि पहले, बात करने या समाज के मामलों में या बाइबल के ज्ञान में या जीवन की और कई बातों में पति को उतना ज्ञान न हो, ऐसा ही पत्नी के साथ भी हो सकता है। दोनों ही मामलों में उन्हें जहां भी कमी है वहां एक दूसरे को बढ़ाने में सहायता करनी चाहिए, ताकि वे एक दूसरे से मेल खाते हो। पढ़ा लिखा पुरुष जिसका विवाह अनपढ़ स्त्री से हो जाए, यदि अपनी पत्नी को जहां तक हो सके, शिक्षा के अपने स्तर तक लाने के लिए काम नहीं करता, तो वह वास्तव में अपने और अपने पूरे परिवार की उन्नति को रोक रहा है।

जब पत्नी को लगे कि किसी बात में उसके पति में कोई खामी है, तो उसे उस बात में आदेश देकर या उसे नीचा दिखाकर या सब के सामने उसकी गलतियां निकालकर या उसकी नुक्ताचीनी करके नहीं बल्कि उसे प्रोत्साहन देते हुए बढ़ने में उसकी सहायता करनी चाहिए। दीनतापूर्वक सहायता करने वाले व्यवहार से उसे बढ़ता देखने में खामोशी से सहायता करके उसे बेहतर बनने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए।

घर में

घर में क्या-क्या जिम्मेदारियां हैं?

पति के लिए अपने परिवार के लिए जीविका कमाना, अपनी पत्नी और बच्चों की रक्षा करना और घर में अगुआ बनना आवश्यक है। उसके लिए उनके और संसार के बीच में खड़ा होना, उनकी आवश्यकताओं का उत्तर बनना आवश्यक है। उसे घर से बाहर जाकर काम करनापड़ता है, इस कारण संसार की कठोरता और अन्याय का सामना करने के लिए, पुरुष को शारीरिक और भावनात्मक मजबूती देकर बनाया गया है जो कि पत्नी से हटकर है। परमेश्वर ने उसे अपने काम के लिए तैयार किया है और उसे अपने काम को बेहतर ढंग से करने के लिए अपने आपको इन सब बातों में और तैयार करना है।

दूसरी ओर पत्नी को घर की देखभाल और परिवार की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए बनाया गया था। इसके लिए अलग प्रकार की सामर्थ की आवश्यकता है, जो कोमलता, करूणा, समझदारी से बच्चों पर अधिकार की कर्तव्यनिष्ठा के साथ होनी आवश्यक है ताकि वे बड़ों का आदर करना सीखें। इफिसियों 6:4 में माता-पिता

को निर्देश दिया गया है कि वे बच्चों को क्रोध न दिलाएं बल्कि उनका पालन-पोषण प्रभु के भय में और शिक्षा देकर करें। इसमें दो बातें कही गई थी एक तो यह कि माता-पिता अपने बच्चों के साथ व्यवहार करने के लिए समझ और विवेक का इस्तेमाल करें, ताकि बच्चे अधीन होना तो सीखें पर विद्रोही बनना नहीं, और दूसरा यह कि परमेश्वर के सामने उन्हें शिक्षा (इसका अर्थ उन्हें मसीही होने की गतिविधियों और काम में अगुआई देना है) और चेतावनी देना (इसका अर्थ उन्हें अच्छी तरह से उन बातों की शिक्षा देना है जो वचन में बताई गई है) माता-पिता की जिम्मेदारी है ताकि वे स्वयं विश्वासी मसीही बनने के लिए बड़े हो सकें।

मसीह का जन्म

जोएल स्टीफ़न विलियम्स

परमेश्वर ने अपने पुत्र को एक बड़े ही आश्चर्यजनक रूप में पृथ्वी पर भेजा था। एक यहूदी पुरूष और एक यहूदी स्त्री को परमेश्वर ने नियुक्त किया था, अपने पुत्र के माता-पिता बनने के लिये। यूसुफ़ और मरियम की मंगनी हो चुकी थी, पर उनकी शादी तब नहीं हुई थी। (मत्ती 1:18-25) मरियम कुंवारी थी (लूका 1:26-34)। परमेश्वर के पवित्र आत्मा की सामर्थ्य से यीशु मरियम के पेट में आ गया था (मत्ती 1:20; लूका 1:35)। इस प्रकार यीशु को पृथ्वी पर एक मां मिल गई थी, परन्तु उसका पिता परमेश्वर स्वयं था। (गल. 4:4; रोमियों 1:3; लूका 1:35)। यीशु मसीह परमेश्वर की सामर्थ से एक कुंवारी के द्वारा उत्पन्न हुआ था।

परमेश्वर का पुत्र पृथ्वी पर एक मनुष्य बनकर आया था। वोह वास्तव में 'अवतार' था। यीशु के पृथ्वी पर जन्म लेकर आने से पहले, की बात का वर्णन करके प्रेरित यूहन्ना ने लिखकर कहा था कि वोह 'वचन' था, जो परमेश्वर के साथ था। ''आदि में वचन था, और वचन परमेश्वर के साथ था, और वचन परमेश्वर था . . . और वचन देहधारी हुआ और अनुग्रह और सच्चाई से परिपूर्ण होकर हमारे बीच में रहा।'' (यूहन्ना 1:1,14; रोमियों 8:3; 1 तीमु. 3:16; 1 यूहन्ना 4:2; 2 यूहन्ना 7)। हमारा उद्धारकर्ता बनने के लिये, मसीह हमारे समान बन गया था। (इब्रानियों 2:14,17)।

यीशु मसीह का व्यक्तित्व कई तरह से निराला था। वोह परमेश्वर था, परन्तु मनुष्य बन गया था। इस पृथ्वी पर वोह मनुष्य के ही रूप में था। (मत्ती 1:1-17; रोमियों 1:3; 9:5)। पहले वोह सामान्य रूप से एक नन्हा बालक था, और फिर धीरे-धीरे वोह एक पुरुष बना था (लूका 2:40)। हमारी ही तरह उसे भूख और प्यास लगती थी, और उसे आराम करने की भी आवश्यकता थी; और वोह प्रार्थना भी करता था। (मत्ती 4:2; 8:24; 14:23; यूहन्ना 4:5-7; 19:28)। एक मनुष्य की ही तरह यीशु को आनन्द, दुख, क्रोध, प्रेम, और दया का अनुभव होता था। (मत्ती 9:36; 26:37; मरकुस 3:5; 10:21; लूका 10:21; यूहन्ना 12:27; 15:11)। यीशु रोया भी था। (यूहन्ना 11:35)। वोह परखा भी गया था (मत्ती 4:1-11; लूका 4:1-13; इब्रा. 4:15)। शारीरिक दुख-दर्द और मृत्यु का अनुभव भी उसे हुआ था। (1पतरस 3:18; 4:1)।

यीशु पृथ्वी पर एक इनसान के रूप में ही था।

किन्तु, यीशु क्योंकि स्वर्ग से आया था इसलिये वोह ईश्वरीय भी था। (यूहन्ना 10:30)। बाइबल में उसे न केवल ''प्रभु'' और ''परमेश्वर का पुत्र'' ही कहकर सम्बोधित किया गया है (यूहन्ना 10:25-33; लूका 2:11; प्रकाशित. 4:8-11; 19-16), परन्तु उसे ''परमेश्वर'' भी कहा गया है। (यूहन्ना 1:1; 20:28; रोमियों 9:5; तीतुस 2:13; इब्रा. 1:8; 2 पतरस 1:1)। उसे अदृश्य परमेश्वर का प्रतिरूप भी कहा गया है। (कुलु. 1:15,19; 2:9)। यीशु पृथ्वी पर मनुष्य के रूप में परमेश्वर था।

यीशु क्योंकि परमेश्वर भी था और मनुष्य भी था, इसलिये वोह वास्तव में मनुष्य का मुक्तिदाता था। वोह परमेश्वर और मनुष्यों के बीच में एक बिचवई बनकर आया था। (1 तीमु. 2:5-6)। एक मनुष्य के रूप में वोह सारी मानवता के पापों का प्रायश्चित कर सकता था। और परमेश्वर के रूप में वोह एक सिद्ध बलिदान देने के योग्य था। वोह एक ऐसा बलिदान था जिसे परमेश्वर ने आरम्भ से ही नियुक्त किया था। (1 पतरस 1:20)। वोह परमेश्वर एक मनुष्य बनकर स्वर्ग से पृथ्वी पर जगत के सब लोगों का पाप से उद्धार करने को आया था। इसलिये जब उसका जन्म हुआ था, तो स्वर्गदूतों ने गड़रियों के एक झुंड को यह संदेश दिया था, ''कि आज दाऊद के नगर में तुम्हारे लिये एक उद्धारकर्त्ता जन्मा है, और यही मसीह प्रभु है।'' (लूका 2:11)।

एक दूसरे की सहायता करना

सूज़ी फ्रैड्रिक

बाइबल हमें बताती है जब कोई व्यक्ति परमेश्वर की आज्ञा को मान लेता है, तब परमेश्वर उसका पिता बन जाता है। (ग़लतियों 3:26-27; रोमियों 8:13-17)। जबकि सब जो उसकी आज्ञाओं को मानकर उसकी सन्तान बन जाते हैं तब इसका अर्थ यह हुआ कि वे सब आपस में ''भाई-बहन'' हैं। इस तरह से, कलीसिया भी एक बड़े परिवार की तरह है।

परमेश्वर चाहता है कि हम अपने परिवारों से प्रेम करें और हम करते भी हैं। जिस प्रकार से हम अपने परिवारों के लिये खाने, कपड़े तथा अन्य वस्तुओं का प्रबंध करते हैं तथा अपने परिवारों में खुशहाली देखना चाहते है, उसी प्रकार से हमें अपने आत्मिक परिवार से भी प्रेम करना चाहिये तथा जब भी आवश्यकता पड़े हमेशा सहायता के लिये आगे बढ़कर आना चाहिये और इस आत्मिक परिवार में अपने भाई-बहनों की आवश्यकता पड़ने पर सहायता करनी चाहिये।

हम अपने परिवार में एक दूसरे के साथ सहभागिता करते हैं। उनके लिये परमेश्वर से प्रार्थना करते हैं ताकि वह उन्हें आशीषित करे। हमें खुशी होती है जब परमेश्वर उन्हें आशीषित करता है। जब वह दु:ख या किसी दर्द में होते है तब हम अपनी तरफ से पूरा प्रयत्न करते हैं ताकि वे अपने दु:ख से छुटकारा पा सकें। हमारे ''आत्मिक परिवार को भी इसी प्रकार की सहभागिता की आवश्यकता होती है। यदि हम अपने आत्मिक भाईयों और बहनों से प्रेम करते हैं तब हर एक स्थिति में चाहे

वो दु:ख का समय हो या खुशी का हम उनके साथ भागी होंगे। (रोमियों 12:15)। अर्थात हम एक दूसरे का हाथ बंटाते हैं। किसी ने कहा है कि जब दो जन मिलकर किसी भार को उठाते हैं तो ऐसा लगता है कि वो भार 10 किलो न होकर पांच किलो है अर्थात वो भार आधा होने लगता है, और ज़रा सोचिये जब दो जन मिलकर खुशी मनाते हैं तो खुशी दो गुनी हो जाती है।

हमारे शारीरिक परिवार हमारे पर निर्भर करते हैं- तथा हम उन पर निर्भर करते हैं और यह इसलिये ताकि हम उनसे भौतिक तथा आत्मिक सहायता प्राप्त कर सकें। आईये अपने बड़े आत्मिक परिवार अर्थात् कलीसिया के बारे में भी हम ऐसा ही विचार रखें। बाइबल हमें सिखाती है: ''यदि कोई मनुष्य किसी अपराध में पकड़ा भी जाए तो तुम जो आत्मिक हो नम्रता के साथ ऐसे को संभालो..... एक दूसरे के भार उठाओ'' (गलतियों 6:1-2)।

जब कोई मसीही विश्वास से गिर जाता है तथा कलीसिया को छोड़कर चला जाता है तब हम जो मजबूत है, क्या उसको वापस लाने का प्रयास करते हैं?

इसे परमेश्वर के हाथ में दे दो

बैटी टक्कर

मुझे एक चीनी भाई स्मरण आता है जो मण्डली में अपनी प्रार्थना का समान हमेशा इन साधारण से शब्दों के साथ किया करता था, ''हम ये सब तेरे हाथों में देते हैं।'' मुझे लगता है कि परमेश्वर को सचमुच में ऐसी ही प्रार्थना पसंद है।

इसमें एक बात का संकेत है कि हम परमेश्वर को अपना स्वामी यानी संसार का हाकिम मान रहे हैं। वह इतना सामर्थी है कि तारों को उनकी कक्षा में रखता है जिससे यह संसार युगों से अच्छी तरह से चल रहा है (अय्यूब 26:7)।

बेशक वह हमारे छोटे मामलों में सीधे दखल दे सकता है जिससे ''सब बातें मिलकर (हमारी) भलाई'' को उत्पन्न करें (रोमियों 8:28) तो फिर हम इस जीवन की परेशानियों पर चिंतित होने में इतना समय क्यों बिता देते हैं?

सब कुछ परमेश्वर के हाथ में देने के विशेष समय

1. जब दोस्त हमें निराश कर दें तो या हमारे साथ विश्वासघात करें, तो हमें यह याद रखना आवश्यक है कि एक मित्र है जो हमें कभी छोड़ता नहीं है (1 शमूएल 12:22)।

2. जब हम अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पैसे की कमी से जूझ रहे हों, तो हम परमेश्वर की ओर देखते हैं। यदि वह जंगली सोसनों को इतना सुन्दर लिबास पहनाता है (लूका 12:27, 28), तो अपने बच्चों की हर आवश्यकता को पूरा क्यों नहीं करेगा।

3. जब जीवन इतना भागदौड़ वाला बन जाए और हम तनाव भरी परिस्थिति में घिर जाए तो हमें ''चुप होकर यह जान लेने के लिए कि (वह ही) परमेश्वर है''

समय निकालना आवश्यक होता है (भजन संहिता 46:10)।

4. जब हम गंभीर बीमारी या मृत्यु का भी सामना कर रहे हों तो हमें स्वर्ग की ओर भरोसे के साथ देखना और उस पर जिसने हमें सृजा है, भरोसा करना आवश्यक है कि वह हमें घोर अंधकार की भरी हुई तराई में से निकाल लेगा (भजन संहिता 23)।

यिर्मयाह नबी ने हमारे स्वर्गीय पिता की एक प्रतिज्ञा को कमलबद्ध किया है और यह प्रतिज्ञा आज भी है। ''मुझ से प्रार्थना कर और मैं और मैं तेरी सुनकर तुझे बड़ी बड़ी और कठिन बातें बताऊंगा जिन्हें तू अभी नहीं समझता'' (यिर्मयाह 33:3)।

1 पतरस 3:12 को फिर से पढ़े। शायद हम किसी न किसी प्रकार से इस आयत के दूसरे भाग से चूक जाते हैं जिसमें कहा गया है, ''...उसके कान उनकी विनती की ओर लगे रहते हैं।'' क्या यह जानना तसल्ली देने वाली बात नहीं है कि परमेश्वर धर्मियों की प्रार्थनाओं को सुनता है?

अपने लोगों को दिया गया परमेश्वर का ऐसा ही एक वायदा यशायाह 65:24 में मिलता है। बूढ़े नबी का दिल कैसे मचला होगा जब उसने ये शब्द सुने होंगे, ''उनके पुकारने से पहले ही मैं उनका उत्तर दूंगा, और उनके मांगते ही मैं उनकी सुन लूंगा।'' परमेश्वर जानता है कि उसके लोगों को क्या चाहिए और उनकी क्या आवश्यकता है। वह हमारी प्रार्थना खत्म होने से पहले ही, उत्तर देना आरंभ कर देता है।

परमेश्वर उत्तर कैसे देता है?

कई बार परमेश्वर हमारी विनतियों के लिए कहता है, हाँ।'' सुलैमान ने बुद्धि मांगी थी (2 इतिहास 1:10)। परमेश्वर ने उसकी विनती मान ली और उसे ''धन सम्पत्ति और ऐश्वर्य'' इतना अधिक दे दिया जितना न तो उससे पहले किसी राजा को मिला था और न ही बाद में।

कई बार परमेश्वर हमारी विनतियों का उत्तर पक्की ''ना'' में देता है। पौलुस एक पवित्र और भक्त विश्वासी था। उसने अपने शरीर में से कांटा निकाले जाने के लिए तीन बार परमेश्वर से विनती की (2 कुरिन्थियों 12:7, 8) जब परमेश्वर ने ''ना'' कहा तो हम क्रूस पर इस बूढ़े सिपाही के दयालुता भरे व्यवहार पर अचंभित होते है। 9 और 10 आयतों में हम उसे ऐसा कहते हुए सुनते हैं, ''यदि इस कमजोरी से मैं और मजबूत हो सकता हूं तो मुझे और कांटे दे दे ताकि मैं और अधिक मजबूत हो सकूं''। आपने और अधिक परीक्षाओं और परेशानियों के लिये कब प्रार्थना की थी कि आपका विश्वास और अधिक मजबूत हो?

फिर ऐसे भी समय आते हैं जब परमेश्वर कहता है, ''अभी रूक जा।'' पहला उदाहरण जो आम तौर पर ध्यान में आता है वह मूसा का ही है। वह लोगों को मिस्र में से तब निकालना चाहता था जब वह जवान ही था। परमेश्वर के प्रबंध के द्वारा मूसा को पहाड़ों की ओर भागना पड़ा। वहां उसने अपनी भेड़ें चराते हुए एक चरवाहे

का एकाकी जीवन बिताया। परमेश्वर जानता था कि मूसा को उम्र बढ़ने, बड़ा होने और सीखने के लिए समय की आवश्यकता है। एक दिन परमेश्वर ने जलती हुई झाड़ी में से मूसा से बात की। पुराने चरवाहे के लिए मिस्र की दासता से लोगों को निकालने का यह सही समय था। मूसा 40 साल तक रूका रहा और अब वह तैयार था।

बाइबल में प्रार्थना के विषय पर हमें बहुत कुछ सीखने को मिलता है। 1 थिस्सलुनीकियों 5:17 में हमें समझाया गया, ''निरन्तर प्रार्थना करते रहो।'' हम जब चाहें परमेश्वर के सिंहासन तक हमारी पहुँच हो सकती है। कितनी अद्‌भुत आशीष है।

बेशक आपके अपने जीवन में कई ऐसे उदाहरण हो सकते हैं जिसमें आपकी प्रार्थना का उत्तर मिला होगा। कोई भी बात इतनी छोटी या बड़ी नहीं है कि उसके लिए प्रार्थना न की जाए। याकूब हमें बताता है कि ''तुम्हें इसलिए नहीं मिलता कि मांगते नहीं'' (याकूब 4:2)।

लग सकता है कि इस इक्कीसवीं सदी की समस्याओं को सुलझाने का सबसे आसान तरीका यही है। परन्तु यदि हम अपने चीनी भाई से, सच्चे मन से परमेश्वर से अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए मांगना सीख सकें और फिर इसे उसके हाथों में दे दें तो पाएंगे कि हमें हमारे बहुत से बोझों और चिंताओं से मुक्ति मिल गई है।

नाम का महत्व

जो भी नाम कोई अपने ऊपर रखता है वह बड़ा आवश्यक होता है और यह उसकी पहचान को बताता है कि वह कौन है। बड़ी-बड़ी कम्पनियां अपने नाम को बहुत महत्व देती हैं और अपने बिजनेस को आगे बढ़ाने के लिए अपने नाम का विज्ञापन देती हैं। कई बार किसी वस्तु की अच्छाई और बुराई उसके नाम से पता चल जाती है और यही सिद्धांत आत्मिक बातों पर भी लागू होता है। इसका अर्थ यह हुआ कि नाम का महत्व होता है। बाइबल सिखाती है, ''किसी दूसरे के द्वारा उद्धार नहीं; क्योंकि स्वर्ग के नीचे मनुष्यों में और कोई दूसरा नाम नहीं दिया गया, जिसके द्वारा हम उद्धार पा सकें'' (प्रेरितों 4:12)।

नाम के महत्व को जानते हुए जो प्रश्न हमारे सामने आता है वह यह है कि यदि हमारा संबंध यीशु से है तो हमें कौन-सा नाम अपने ऊपर रखना चाहिए? बाइबल कहती है हम परमेश्वर की संतान हैं, पवित्र हैं और अलग किए हुए हैं, और ऐसे लोग हैं जिनका संबंध प्रभु यीशु से है। परन्तु अपने आपको व्यक्त करने के लिए हमें क्या नाम रखना चाहिए? आइए परमेश्वर के वचन की ओर वापस जाएं और देखें कि पहली शताब्दी में यीशु के लोग किस नाम से जाने जाते थे? हम नये नियम में पढ़ते हैं और ''चेले सबसे पहले अन्ताकिया में मसीही कहलाए'' (प्रेरितों 11:26)। वे किस नाम से जाने जाते थे? मसीही और केवल मसीही नाम से। क्या वहां कई प्रकार के मसीही थे? नहीं वे केवल मसीही थे। आज प्रभु के लोग किस

नाम से जाते हैं यह बात अपने आप में बहुत महत्व रखती है? यही बात बिल्कुल उचित है। यदि हमारा संबंध प्रभु यीशु से है तो हमें आज क्या होना चाहिए? यदि हम यीशु के कदमों पर चल रहे हैं तब हमें उसके लोग होते हुए, मसीही होना चाहिए। जिसका अर्थ है ''मसीह जैसा।''

परतस ने कहा था, ''पर यदि मसीही होने के कारण दुख पाए तो लज्जित न हो पर इस बात के लिए परमेश्वर की महिमा करे'' (1 पतरस 4:16)। यहां पतरस किन लोगों के विषय में बात कर रहा था? वह उनके विषय में बोल रहा था जिन्होंने यीशु के नाम को अपने ऊपर रखा था अर्थात जो मसीही बन गए थे तथा स्पष्ट रूप से वह उन्हें यह बताने का प्रयत्न कर रहा था कि उन्में मसीही नाम अपने ऊपर रखकर शरमाना नहीं चाहिए बल्कि इस नाम के द्वारा परमेश्वर की महिमा करनी चाहिए। प्रभु की महिमा करने का केवल यही रास्ता है कि सब उसके नाम में करें अर्थात मसीही नाम को अपने ऊपर रखते हुए।

प्रेरित पौलुस ने एक बार मसीहियों को लिखते हुए कहा था, ''वचन से या काम में जो कुछ भी करो सब प्रभु यीशु के नाम से करो, और उसके द्वारा परमेश्वर पिता का धन्यवाद करो'' (कुलुस्सियों 3:17)। परन्तु मैं आपसे यह प्रश्न पूछना चाहता हूं कि कोई यदि उसका नाम ही अपने ऊपर नहीं रखता तो वह सब कुछ उसके नाम में कैसे कर सकता है? वह ऐसा नहीं कर सकता क्योंकि उसका संबंध यीशु से नहीं है। आज कुछ लोग अपना समय नष्ट कर रहे हैं क्योंकि वे साम्प्रदायिक नामों को अपने ऊपर रखकर प्रभु की महिमा करना चाहते हैं। उन्होंने मनुष्यों द्वारा बनाये गए नामों को अपने ऊपर रखा हुआ है और धार्मिक रूप से उन्हीं के द्वारा वे जाने जाते हैं। बड़ी ही विचित्र बात है कि लोग मसीही नाम के साथ कुछ और भी जोड़ना चाहते हैं क्योंकि मनुष्य चाहता है कि वह एक अलग किस्म का मसीही हो अर्थात वह अपने मसीही नाम के साथ कैथोलिक, मैथोडिस्ट, बैपटिस्ट, लूथरन इत्यादि नामों को लगाना पसंद करता है जबकि प्रभु चाहता है कि वह केवल एक मसीही हो। हां, यह संभव है कि हम केवल मसीही नाम से जाने जाएं, लेकिन कैसे? सुसमाचार को मानकर तथा प्रभु की कलीसिया के एक सदस्य बनकर। यदि आप अपने आप को मसीही नाम से कुछ अधिक कहते हैं तो आप एक सच्चे मसीही नहीं है। और यदि मसीही नाम से कम हैं तब भी आप सच्चे मसीही नहीं है। प्रभु चाहता है कि हमारा संबंध उससे हो न कि किसी मनुष्य से। आइए हम केवल और केवल एक मसीही हों।

लेकिन सामूहिक रूप से सारे मसीही लोग अर्थात कलीसिया का नाम बाइबल के अनुसार क्या होना चाहिए? कलीसिया को बनाने की प्रतिज्ञा किसने की थी? किसने इसकी स्थापना की थी, इसका सिर कौन है? इसका उद्धारकर्ता कौन है? इसे किसने अपने लोहू से मोल लिया है? इसके लिए कौन वापस आ रहा है? मत्ती 16:18 के अनुसार यीशु ने अपनी कलीसिया बनाने की प्रतिज्ञा की थी तथा प्रेरितों 2, कुलुस्सियों 1:18; इफिसियों 5:23; प्रेरितों 20:28 तथा इफिसियों 5:27 इन सब पदों में इन सब प्रश्नों का उत्तर है। इसलिए कलीसिया को यीशु मसीह का नाम

अपने ऊपर रखना चाहिए। सारे मसीही मिलकर ''मसीह की कलीसिया'' के सदस्य हैं।

पौलुस ने रोमियों 16:16 में कहा था ''तुम को मसीह की सारी कलीसियाओं की ओर से नमस्कार''। शायद कोई यह कहे कि इसका अर्थ है सारी साम्प्रदायिक कलीसियाएं जो आज संसार में विद्यमान हैं लेकिन ऐसा नहीं है और यदि आप संदर्भ को देखें तो आपको पता चलेगा कि पौलुस विभिन्न स्थानों पर स्थित मसीह की कलीसियाओं की बात कर रहा था। जैसे कुरिन्थुस, थिस्सलुनीके, इत्यादि।

रोम में कलीसिया को लिखते हुए उसने कहा था, ''सारी मसीह की कलीसियाएं जो रोम में है।, उन्हें नमस्कार।''

परन्तु कई लोग यह भी कहते हैं कि एशिया की सात मण्डलियां (प्रकाशितवाक्य 1-3), क्या साम्प्रदायिक कलीसियाएं नहीं थी? यीशु ने केवल एक कलीसिया को बनाया था, उसने बहुत सारी साम्प्रदायिक कलीसियाओं की स्थापना नहीं की थी। कोई भी कलीसिया यदि उसका नाम अपने ऊपर नहीं रखती तो वह मसीह की कलीसिया नहीं हो सकती। यदि वह प्रभु का नाम ही अपने ऊपर नहीं रखती तो कैसे उसकी हो सकती है?

यीशु चाहता है कि उसका प्रत्येक अनुयायी मसीही नाम से जाना जाए तथा सारे मसीही लोग मिलकर ''मसीह की कलीसिया'' नाम से जाने जाए। क्या आप एक मसीही हैं? क्या आप मसीह की कलीसिया के एक सदस्य है? यदि नहीं तो आप उसे कैसे प्रसन्न कर सकते हैं? आप कैसे उसके वचन में बने रह सकते हैं? मेरे मित्र सच्चाई को सुनिए तथा सच्चाई को स्वीकार करिये।

वह समय आता है (यूहन्ना 16)

ऍंडी क्लोर

मैंने ये बातें तुम से दृष्टांतों में कही हैं, परन्तु वह समय आया है, कि मैं तुम से दृष्टांतों में और फिर नहीं कहूंगा, परन्तु खोलकर तुम्हें पिता के विषय में बताऊंगा। उस दिन तुम मेरे नाम से मांगोगे और तुम से यह नहीं कहता, कि मैं तुम्हारे लिए पिता से विनती करूंगा। क्योंकि पिता तो आप ही तुम से प्रीति रखता है, इसलिए कि तुम ने मुझ से प्रीति रखी है, और यह भी प्रतीति की है, क मैं पिता की ओर से निकल आया। मैं पिता से निकलकर जगत में आया हूं, फिर जगत को छोड़कर पिता के पास जाता हूं। (आयतें 25-28)।

विभिन्न संदर्भों में यीशु ने सेवकाई के समय के काल को चिन्हित करने के लिए अपने समय पदनाम का इस्तेमाल प्रतीकात्मक अर्थ में किया। उसने अपने ईश्वरीयता के अनावरण के समय को इसमें लेने के लिए इसका इस्तेमाल किया। गलील के काना में विवाह की दावत में उसने अपनी माता से कहा था, हे महिला, मुझे तुझ से क्या काम? अभी मेरा समय नहीं आया (यूहन्ना 2:4)। पिता की गैर

स्थानीय आराधना के निकट आने की ओर इशारा करने के लिए उसने इसी शब्द का इस्तेमाल किया था। उसने कहा, परन्तु वह समय आया है, वरन अब भी है जिसमें सच्चे भक्त पिता की आराधना आत्मा और सच्चाई से करेंगे, क्योंकि पिता अपने लिए ऐसे ही आराधना करने वालों को ढूंढता है (यूहन्ना 4:23)। हम यह भी देखते है कि उसने इसका इस्तेमाल अपने क्रूस पर चढ़ाए जाने के संबंध में भी किया। लाजर की कब्र पर उसने कहा, अब मेरा जी व्याकुल हो रहा है। इसलिए अब मैं क्या कहूं? हे पिता, मुझे इस घड़ी से बचा? परन्तु मैं इसी कारण इस घड़ी को पहुंचा हूं (यूहन्ना 12:27)।

गुरूवार देर रात, गिरफ्तार करने के लिए आने वाली भीड़ के निकट आने पर यीशु ने अपने प्रेरितों के साथ आगे को देखा और उन्हें उस अद्‌भुत घड़ी के बारे में बताया जो आने वाली है। क्रूस पर चढ़ाए जाने के दुख और उलझन भरे समय के बाद एक विशेष अर्थात तेज से भरी घड़ी आने वाली थी। आश्वासन के सार्थक अवसरों के साथ, यीशु ने कहा, वह समय आता है (16:25)। उसकी भविष्यवाणी समय के उस छोटे से पल के लिए नहीं थी जो आने वाला था और शीघ्र ही जाने वाला था। इसमें समय का अभी होने वाला वह पल, अर्थात पूर्ण और सम्पूर्णता का समय अर्थात मसीही युग का प्रारंभ था। ऐसा आश्वासन प्रेरितों के लिए शक्ति देने वाली बात है। यह वह अंतिम विस्तृत प्रतिज्ञा थी जो यीशु ने अपनी विदाई के लिए अपने प्रेरितों को ब्यान करते हुए उनके साथ बातचीत में की।

आइए देखते हैं कि यह घड़ी या समय क्या था, जिसकी ओर उसने ध्यान दिलाया। हमें उस समय के पूरा होने के अर्थ को वैसे ही समझने की आवश्यकता है जैसे प्रेरितों के लिए थी।

समझ का समय

पहले तो यह स्पष्ट समझ का समय था। यीशु ने उनसे कहा, मैंने ये बातें तुम से दृष्टांतों में कही हैं; परन्तु खोलकर तुम्हें पिता के विषय में बताऊंगा (16:25)।

यीशु उस सब के बारे में जो उसके साथ होने वाला था धीरे-धीरे पिता की इच्छा को बता रहा था। परन्तु प्रेरितों और नये नियम के मसीही लोगों के लिए परमेश्वर की योजना के विषय में समझ की परिपूर्णता में प्रवेश करने का समय शीघ्र निकट आ रहा था। प्रभु ने पहले प्रतीकात्मक भाषा अर्थात दृष्टांतों में बात की थी जिसमें उसने दाखरस के रूपक (15:1-8) और जनने की पीड़ा वाली स्त्री का उदाहरण दिया था (16:20-22)। ये नमूना समझ मिलने के उसके सुनने वालों के मनों में सच्चाई को बनाए रखने के लिए काफी था। उसकी सेवकाई में दृष्टांतों, उपमाओं और रूपकों का इस्तेमाल किया गया था। परन्तु वह समय निकट आ रहा था जब ऐसी भाषा अनावश्यक होनी थी।

पवित्र आत्मा से सामर्थ पाकर प्रेरितों को परमेश्वर की योजना का पूरा ज्ञान मिल जाना था। उनके प्रचार करने और सीखने के समय वह ज्ञान जो परमेश्वर ने उन पर प्रगट किया था उन सब में भरा जाना था जो विश्वास करना चाहते थे। पूर्ण समझ का दिन आरंभ हो रहा था। जिसमें मसीही छुटकारों का आधार बन रहा था।

विश्वासियों को सच्चाई का ज्ञान होना था ताकि सच्चाई उन्हें अज्ञानता, उलझन, और उस नासमझी से आजाद करे जिसमें वे पहले फंसे हुए थे।

पहुंच का समय

दूसरा, वह समय आ रहा था जब पिता तक सीधी पहुंच संभव होनी थी। यीशु ने कहा,

''उस दिन तुम मेरे नाम से मांगोगे, और मैं तुम से यह नहीं कहता कि मैं तुम्हारे लिए पिता से विनती करूंगा। क्योंकि पिता तो आप ही तुम से प्रीति रखता है, इसलिए कि तुम ने मुझ से प्रीति रखी है, और यह भी प्रतीति की है, मैं पिता की ओर से निकल आया।'' (16:26, 27)।

ग्यारह के साथ अपनी पहली बातचीत में उसने प्रतिज्ञा की थी वह उससे मांग सकते हैं और पिता उनकी विनतियों को सुनेगा (16:23, 24)। परन्तु वह पिता के साथ अपनी एकता और एक होने का सबूत दे रहा था। उसने पिता से वैसे ही प्रार्थना करनी थी जैसे वे पुत्र के साथ प्रार्थना करते थे। संसार के होने से पहले यीशु पिता के साथ था; अब वह पिता अपने पहले वाले स्थान में लौट रहा था। इस संबंध में उनके इस विश्वास के कारण कि यीशु अपने पिता की ओर से आया है, यीशु और पिता को कार्य करना था और प्रेरितों के प्रति एक रूप में जवाब देना था।

प्रेरितों और सब विश्वासियों की अब पिता और पुत्र कि पूरी पहुंच हुई थी। यशायाह 57:17 में से उद्धृत करते हुए, पौलुस ने लिखा–

और उसने आकर तुम्हें जो दूर थे, और उन्हें जो निकट थे, दोनों को मेल–मिलाप का सुसमाचार सुनाया। क्योंकि उस ही के द्वारा हम दोनों की एक आत्मा में पिता के पास यीशु ने अपने प्रेरितों से जो कहा वह प्रार्थना के लिए हमारा सबसे बड़ा नियंत्रण है। उन्हें यीशु के द्वारा पिता से प्रार्थना करनी थी, जो पिता के पास होना था। यीशु पिता के साथ एक है और वह प्रेरितों को जानता और उसे देखता है, इसलिए पिता को भी उन्हें जानना और उन से प्रेम करना था। वे पुत्र को पिता की ओर से भेजा हुआ मानते और उसकी आज्ञा का पालन करते थे इसलिए पिता ने उन्हें मानकर आशीष देनी थी।

विश्वास का समय

तीसरा, अधिकृत विश्वास का समय होगा। एक बार फिर से उसके शब्दों पर विचार करते हैं–

उस दिन तुम मेरे नाम से मांगोगे और मैं तुम से यह नहीं कहता, कि मैं तुम्हारे लिए पिता से बिनती करूंगा। क्योंकि पिता तो आप ही तुम से प्रीति रखता है, इसलिए कि तुम ने मुझ से प्रीति रखी है, और यह भी प्रतीति की है, कि मैं पिता की ओर से निकल आया। मैं पिता से निकलकर जगत में आया हूं, फिर जगत को छोड़कर पिता के पास जाता हूं। (16:26–28)।

यीशु की ईश्वरीयता में वे पक्का ठोस विश्वास बना रहे थे, उनमें बढ़ने वाला विश्वास था, यदि इससे पहले उनमें कोई संदेह था, यीशु पिता की ओर से आया है।

अपने पुनरुत्थान के बाद यीशु ने कई पक्के प्रमाणों के साथ दिखाना था कि वह सचमुच में मुर्दों में से जी उठा है (प्रेरितों 1:2, 3) फिर प्रेरितों ने दर्शन, यहूदिया और सामरिया और पृथ्वी के छोर तक इस बात में मसीह के गवाह होना था कि वह जी उठा है (प्रेरितों 1:8)। मसीही युग का आरंभ विश्वास की पूर्णता का समय होना था।

यीशु की मृत्यु और पुनरुत्थान के संबंध में दिया गया परमेश्वर का पूरा प्रमाण प्रेरितों और परमेश्वर की प्रेरणा पाए अन्य लोगों के काम में साफ दिखाई देता है। परमेश्वर ने अपने पुत्र में विश्वास का प्रमाण देने के लिए जो भी योजना बनाई थी वह सब दे दिया है। जो कोई विश्वास करना चाहे वह विश्वास कर सकता है।

ईश्वरवादी विकासवाद

जॉन स्टेसी

मसीही विश्वास को आज एक बहुत बड़ा खतरा बाइबल में विश्वास करने वाले ऐसे लोगों से है जो ईश्वरवादी विकासवाद को मानते हैं।

ईश्वरवादी विकासवादी क्या है? इस धारणा के अनुसार, मनुष्य की देह का विकास पशु से हुआ है, और उस देह में परमेश्वर ने कुछ समय बाद आत्मा को डाल दिया था, और इस प्रकार मनुष्य का आरंभ हुआ था।

बहुत से लोग कहते हैं, कि क्या परमेश्वर मनुष्य को विकास के द्वारा नहीं ला सकता था? फिर इस बात पर बहस क्यों की जाए? किन्तु बाइबल इस विषय में क्या कहती है? क्या मनुष्य के विकास के बारे में बाइबल में कहीं कुछ मिलता है? क्या कुछ ऐसी ठोस बातें हैं जिनके द्वारा ईश्वरवादी विकासवाद को गलत सिद्ध किया जा सके?

इस संबंध में हम बाइबल के कुछ हवालों को देखना चाहेंगे जो ईश्वरवादी विकासवाद को गलत ठहराते हैं। उत्पत्ति 11 में हम यूं पढ़ते हैं, 'आदि में परमेश्वर ने आकाश और पृथ्वी की सृष्टि की। यह शब्द सृष्टि की इब्रानी के बारा शब्द का अनुवाद है, जिसका मूल अर्थ है शून्य में से उत्पन्न करना। तोभी, विकासवादी लोगों का कहना है कि तत्व तो सदा से ही विद्यमान है। जो लोग ईश्वरवादी विकासवाद का मत रखते हैं, उनका कहना है कि उत्पत्ति का प्रत्येक दिन भूवैज्ञानिक युग के समान है। और उनका ऐसा सोचना आवश्यक भी है, क्योंकि उनके मत को विज्ञान का सहारा मिलता है, जिसके अनुसार सारा जगत लाखों और करोड़ों वर्षों के विकास के बाद अस्तित्व में आया है। तोभी बाइबल में उत्पत्ति की पुस्तक के एक से तीन अध्यायों तक तब कभी भी दिन शब्द का उल्लेख हुआ है उसे इब्रानी भाषा के यौम शब्द से लिया गया है। इब्रानी भाषा में लिखे गए पुराने नियम में सैंकड़ों बार इस शब्द का वर्णन हुआ है, और हर बार इसका तात्पर्य चौबीस घंटों के एक दिन से है।

निर्गमन 20:11 में हमें इस प्रकार मिलता है, क्योंकि छः दिन में यहोवा ने आकाश और पृथ्वी और समुद्र और जो कुछ उन में है, सब को बनाया और सातवें दिन विश्राम किया। और अब ध्यान दें निर्गमन 31:16 पर जहां मूसा ने इस प्रकार कहा था सो इस्राएली विश्राम दिन को माना करें, वरन पीढ़ी-पीढ़ी में उसको सदा की वाचा का विषय जानकर माना करे। जिस बात को हम देखने का प्रयत्न कर रहे है। वह यह है, कि विश्राम के दिन का तात्पर्य सृष्टि के अन्य दिनों की तरह चौबिस घंटों के एक दिन से था न कि एक भूवैज्ञानिक काल से। यहां लेखक मूसा चौबिस घंटों के सामान्य दिन के बारे में कह रहा है। इसके अतिक्ति विश्राम दिन को छः दिन में जगत की उत्पत्ति होने की स्मृति में विशेष ठहराया गया था। मूसा ने उत्पत्ति 2:1 में कहा था, यो आकाश और पृथ्वी और उनकी सारी सेना को बनाना समाप्त हो गया।

जबकि विकासवादी मत यह है कि संसार की सृष्टि अभी समाप्त नहीं हुई है, पर प्रत्येक वस्तु का विकास हो रहा है, और होता रहेगा।

उत्पत्ति 3:9:13 में हम पढ़ते है। कि किस प्रकार मनुष्य का पतन हुआ था। तब से लेकर मनुष्य और सम्पूर्ण सृष्टि का पतन होता ही जा रहा है। सारी वस्तुएं घटती ही जा रही है। पाप का परिणाम ऐसा विनाशकारी सिद्ध हुआ कि सारी सृष्टि उससे प्रभावित हो गई है। यह बाइबल हमें सिखाती है। तोभी विकासवादी लोगों का यह मत है कि सब वस्तुओं का सुधार और विकास हो रहा है, और पाप के द्वारा मनुष्य गिर-गिर कर संभल रहा है और उसका स्तर ऊंचा होता जा रहा है। विकासवाद को मानने वाले लोग पाप के कारण मनुष्य के पतन का इंकार करते हैं और इस प्रकार वे मसीह और पापियों के लिये उसकी मृत्यु का भी इंकार करते हैं। इसलिये, सच्चाई में, ईश्वरवादी विकासवादी मत गलत और बाइबल की शिक्षा के विरूद्ध और मसीही विरोधी है।

इस झूठी शिक्षा के विरोध में ये कुछ ठोस तर्क हैं जिनका इंकार नहीं किया जा सकता। अभी कुछ ही समय पूर्व एक बड़ा ही भयानक तथ्य जो सामने आया है वह यह है कि बहुत से नौजवान जो भविष्य में बाइबल के प्रचारक बनने की ट्रैनिंग ले रहे है ईश्वरवादी विकासवाद में विश्वास करते हैं। जो लोग बाइबल में विश्वास करते हैं और उसे परमेश्वर का वचन मानते हैं उन्हें सतर्क होने की आवश्यकता है और इस बात पर ध्यान देने की जरूरत है कि बाइबल में वर्णित सृष्टि के वर्णन को ही हर जगह सिखाया जाए, अन्यथा मसीही विश्वास अर्थहीन बन जाएगा।

यदि हम में से कोई यह कहे कि उत्पत्ति का वर्णन एक मनगढन्त किस्सा है, तो फिर बाइबल में लिखी सभी अन्य बातों के बारे में हम क्या कहेंगे? ईश्वरवादी विकासवाद कलीसिया के लिये हानिकारक है, और आत्मा के लिये विनाशक है। इसलिये शैतान की इस नाश करने वाली शिक्षा के चुंगल में फंसने से बचे।